नागरी पत्रिका

वर्ष २४ अंक १० जनवरी १९९२ ई०

नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी
मूल्य : रु० २-०० प्रति अंक
रु० २०-०० वार्षिक

संपादक : **सुधाकर पांडेय**
संपादक मंडल :
डॉ० लक्ष्मीशंकर व्यास, विश्वंभरनाथ द्विवेदी
डॉ० विजयपाल सिंह, डॉ० शितिकंठ मिश्र
डॉ० जितेंद्रनाथ पाठक, डॉ० मोहनलाल तिवारी
डॉ० शकुंतला शुक्ल
दिल्ली कार्यालय : **डॉ० पद्माकर पांडे**
१ ए, सुनहरीबाग रोड, नई दिल्ली।

१–संपादकीय १
२–सोनिया गांधी का पत्र २
३–नव वर्ष —शान्ता सिन्हा ३
४–अर्जुन सिंह का पत्र ३
५–डा० संपूर्णानंद जयंती समारोह ४
६–सख्य–रस
—स्वामी अखंडानंद ५
७–सवान–ए–उमरी
—चौ० गिरीशचंद ९
८–हिंदी सा० में आतकवादी ···
—डा० सतीशराज पुस्करणा १४
९–ऋग्वैदिक एवं महाकाव्य ···
राघवेन्द्र जी दूबे १७
१०–हृदय की अनुकृति वाह्य उदार
—डा० कुमुदप्रभा श्रीवास्तव २०
११–राष्ट्र भावना के विकास में ···
—अर्चना उपाध्याय २३
१२–'अनत' के भारत संबंधी ···
—रहमत जोगी २५
१३–पं० जवाहर लाल नेहरू का ···
—असीम कुमार मिश्र २७
१४–पं० सुमित्रानदन पंत : एक दृष्टि
—श्री नारायण ३०
१५–डा० सतीशराज पुष्करणा की दो
लघु कथाएं ३२
१६–साहित्यकी परंपरा और ··
—गायत्री माहेश्वरी ३३
१७–शंकर वर्मा
—अनिल शंकर व्यास ३६

संपादकीय

सन् १९९२ अनेक संभावनाओं और आशंकाओं को लेकर आया है। स्वदेश और समग्र संसार एक ऐसे दोराहे पर खड़ा है जहाँ से समझदारी के साथ चलने पर संगठन, एकता और अखंडता की उपलब्धि संभव है अन्यथा विघटन और विनाश की भी आशंकाएँ हैं। देश में विघटनकारी उपद्रवों के पीछे जो देशी-विदेशी ताकतें हैं वे ऐसी अपराजेय नहीं हैं कि राष्ट्र उनके नापाक इरादों को विफल न कर सके, परंतु आवश्यकता है कि हम स्वयं में ईमानदार हों। नेता और राजनीतिक पार्टियाँ वोट की गंदी राजनीति से ऊपर उठें और प्रशासन देशभक्ति की भावना से हर कुर्बानी के लिए तैयार होकर सख्ती से कदम उठाए। इस रास्ते पर थोड़ी दूर ही चलने पर असम का जो परिणाम सामने आया है उससे प्रेरणा लेकर अन्यत्र भी विघटनकारी तत्वों को राष्ट्रीय धारा में मिल जुल कर चलने के लिए बाध्य किया जा सकता है। यदि ऐसा हुआ और पंजाब में ईमानदारी से चुनाव सफल कराया जा सका तो सन् ९२ में देश पिछले दशक से झेलते हुए आतंकवाद पर काबू पाने का मार्ग ढूंढ़ सकेगा और एक संगठित सशक्त देश के रूप में उभरेगा।

आर्थिक मोर्चे पर भी जय-पराजय की संभावनाएँ बराबर दिखाई दे रही हैं। वर्तमान सरकार पिछली दो अल्पजीवी सरकारों पर सारा दोष मढ़ कर छुट्टी नहीं पा सकती क्योंकि

'राष्ट्रभावना के विकास में जनसंचार माध्यमों का योगदान'

—अर्चना उपाध्याय

संचरण और सम्प्रेषण अभिव्यक्ति की जान हैं। इनके अभाव में भावाभिव्यक्ति पंगु हो जाती है तथा अपना अभीष्ट पाने में असफल ही रहती है। लोकचेतना का विकास, चतुर्मुखी प्रतिभा का निर्माण, समाज के बहुआयामी तस्वीर से जनसाधारण को अवगत कराना—ये जनसंचार के ऐसे सार्थक अभीष्ट हैं जिनको हासिल करने के लिए अनेक माध्यमों का सहारा लिया जाता है। ध्यान रहे, उपर्युक्त लक्ष्य सकारात्मक हैं, इन्ही माध्यमों का प्रयोग नकारात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भी हो सकता है।

जनसंचार माध्यम परम्परागत तथा गैर परम्परागत की कोटि में रखे जा सकते हैं। प्रथम कोटि में वे माध्यम हैं जो युगों—युगों से प्रयोग में लाए जाते रहे हैं, तथा जो हमारे गांवों व लोक संस्कृति से जुड़े हुये रहे—यथा, श्रुति, उपनिषद्, पुराण; आख्यायिका, लोकगीत, नाटक, कठ—पुतली, नौटंकी, नृत्य मंडलियाँ, घुमंतू गवैये, चौपाल आदि। गैर परम्परागत अथवा आधुनिक माध्यम हमारी विधाओं के वाह्य माध्यमों से समागम के परिणाम हैं, तथा संकर होने के नाते अधिक सशक्त हैं। इनमें मुख्य हैं—रेडियो, फिल्म, दूरदर्शन, समाचार पत्र तथा पत्रिकाएँ।

जनसंचार के साधनों से जहाँ एक ओर अज्ञानता में कमी व लोकचेतना में वृद्धि होती हैं वहीं वसुधैव कुटुम्बकम् विश्व बन्धुत्व तथा राष्ट्रीयता की भावनाओं को भी सहारा मिलता है। जब किसी भूभाग की परिसीमाएँ लघु व सीमित रहती हैं, तब परम्परागत लोकसंचार साधन ही काफी हैं, पर जब देश का भूभाग विशाल तथा विषम हो, उस समय आधुनिक साधन काफी सशक्त भूमिका अदा करते हैं। पर इस सत्य को नकारा नहीं जा सकता कि राष्ट्रभावना के विकास में संचार माध्यमों का अभूतपूर्व योगदान है।

जब भारतवर्ष में राजनीतिक एकता का अभाव था, उस समय भी गीतों तथा धार्मिक प्रवचनों के माध्यम से सांस्कृतिक, धार्मिक व भावनात्मक एकता तथा राष्ट्रवाद की भावना कायम थी। देखें—भारतवर्ष की परिभाषा में कहा गया है—

"उत्तरम् यद् समुद्रस्य, हिमाद्रश्चैव दक्षिणम्।
भारतम् तद् भारती नाम, भारतीयस्य संततिः॥"

अशोक महान् के समय तक लोकसंचार के माध्यम के रूप में शिलालेखों ने गांधार प्रदेश (आधुनिक कन्दहार) तक में इस भावना को शक्ति दी। कालांतर में इस विधा का प्रयोग गुप्त सम्राटों तथा मुगलों द्वारा भी किया जाता रहा। अंग्रेजों के जमाने में भारतीयों ने अंग्रेजों द्वारा सिखाई विधियों को दोहरी खूबी के साथ उन्हीं के विरुद्ध राष्ट्रभावना के विकास में किया। भारत में समाचार पत्रों के उद्भव व विकास का श्रेय अंग्रेजों को जाता है—उन्नीसवीं सदी के आरंभ में एक अंग्रेज ने ही बंगाल से प्रथम साप्ताहिक पत्रिका निकाली। इस विधा को अंगीकृत करके लाला लाजपत राय ने 'पंजाब केसरी' द्वारा राष्ट्रभावना की भेरी बजाई। गांधी जी के 'हरिजन' तथा 'यंग इण्डिया' ने तथा इलाहाबाद से निकलने वाली 'चाँद' पत्रिका ने मुक्त रूप से राष्ट्रीयता मुखरित की। लोगों की प्रतिक्रियाएँ अपेक्षित रहीं। फिल्मों तथा नाटकों द्वारा भी इस भावना को बढ़ावा मिला। प्रसाद ने ऐसे समय ऐतिहासिक नाटकों की एक लम्बी शृंखला ही निकाली जिसके द्वारा उन्होंने पाश्चात्य सभ्यता की मरीचिका में फँसे भारतीयों को अपने इतिहास पुरुषों के धीरोदात्त गुणों में दीक्षित करके उद्दाम राष्ट्रभावना जगाई। प्रेमचन्द ने भी वही किया। उनकी 'सोजेवतन' का वही हश्र हुआ जो कालांतर में अमृतलाल नाहटा की 'किस्सा कुर्सी का' नामक रचना

का हुआ—किसी गैर राष्ट्रवादी अंग्रेज ने उसे फाड़कर जला डाला। इसमें कोई भी अतिशयोक्ति नहीं होगी यदि हम यह कहें कि राष्ट्रीय चेतना को जन्म देने व उसके विकास में मुख्य हाथ संचार माध्यमों का ही था। जिस बंगाल के अकाल के समाचारों तथा भूखी जनता की क्षुधा की कारुणिक व्यथा कथा ने बंगाल में 'आनन्द मठ' समेत अनेक संचार माध्यमों को जागृत कर लोगों के भग्न हृदय में राष्ट्रभावना पिरोई, उसी प्रकार गांधी के दक्षिण अफ्रीका की कीर्तियात्रा का चक्षुदृश्य वृतान्त भारतीयों की सुसुप्त राष्ट्रीयता के लिये पलीते जैसा रहा तथा एक नगण्य काला बकील राष्ट्रपिता तथा अन्तर्राष्ट्रीय 'नंगा फकीर' बन गया। बापू संचार माध्यमों द्वारा सामने की कतारों तक धकेले गये राष्ट्रपिता ही नहीं अपितु आकुल राष्ट्रवाद की प्रसव वेदना के शिशु थे।

स्वतन्त्रता पूर्व के भारत में जो राष्ट्रवाद जनमी, स्वातन्त्र्योत्तर भारत में संचार माध्यमों द्वारा वह पनपी, सशक्त हुई तथा संकीर्णता को प्राप्त हुई। दूरदर्शन, फिल्म तथा रेडियों ने इस क्रमागत वृद्धि तथा आंशिक ह्रास में एक अहम भूमिका अदा की। इसका कारण रहा इन विधाओं का सरकारीकरण, जिसकी वजह से ये तीनों सरकार के मुखापेक्षी ही नहीं सरकार की आवाज बन गए। समाचार पत्रों की भूमिका ऐसी परिस्थितियों में अधिक सकारात्मक रही, पर दोषों से पूर्णतः मुक्त नहीं हो सकी।

रेडियो व दूरदर्शन ने राष्ट्रीयता से ओतप्रोत कार्यक्रम प्रसारित किए। 'तमस', 'लोहित किनारे' जैसे कार्यक्रमों से जहाँ देश के सुदूर हिस्सों को मिलाया, वहीं 'परमवीर चक्र' 'ये गुलिस्तां हमारा' जैसे संवेदनशील कार्यक्रमों ने राष्ट्रवाद के प्रति उदासीन हो रही भौतिकवादी जनता को एक झटका अवश्य दिया। परन्तु, साथ ही साथ संकीर्ण राष्ट्रवाद के उदय में भी इन माध्यमों ने कम सहयोग नहीं किया है। यदि लोक-संचार के साधन अखंड राष्ट्रवाद के स्थान पर हिंदू कट्टर राष्ट्रवाद या मुस्लिम राष्ट्रवाद या दक्षिण राष्ट्रवाद जैसी काल्पनिक पर घातक भावनाओं के पोषक बन जायें तो इसका जख्म देश को ही झेलना पड़ेगा और दरारें पड़ेंगी, और दीवारें बनेंगी तथा अखंड राष्ट्र का यथार्थ स्वप्न में परिणत हो जाएगा।

कार्यपालिका, विधायिका तथा न्यायपालिका किसी राष्ट्र या देश के तीन स्तम्भ हैं, चौथा स्तम्भ है समाचार पत्र। इसी कारण इसे (फोर्थ इस्टेट) भी कहा जाता है। इसका कारण यह है कि समाचार पत्र समष्टिगत रूप से इन तीनों गुणों को सन्धान करता है। ऐसी परिस्थितियों में, जब अन्य संचार साधन शिथिल पड़ गये हों या पूर्वाग्रह की भाषा मुखरित करने लगे हों, समाचार पत्रों को पीत-हरित पत्रकारिता के आवर्त्त से उबर कर राष्ट्र के एक सजग प्रहरी की अपनी भूमिका द्वारा देश व समाज को उसकी पंकिल संकीर्णता से उठाकर अखंड राष्ट्रवाद का पाठ सिखाने का काम शुरू कर देना चाहिए। यही इनका मार्ग है, और यही इनका ध्येय भी। इससे इतर जो कुछ भी है, उचित नहीं।

★

हिंदी विश्वकोश

लगभग एक हजार राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त देशी-विदेशी विद्वानों द्वारा प्रस्तुत हिंदी विश्वकोश, हजारों चित्रों से युक्त, साइज ड० डि० अठपेजी, कुल पृष्ठ सं० लगभग ६००० मूल्य रु० लगभग १०००-०० । नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी